द्वितीय अध्याय

"आदिवासी जीवन और विवेच्य उपन्यास का आदिवासी जीवन"

द्वितीय अध्याय
''आदिवासी जीवन और विवेच्य उपन्यास का आदिवासी जीवन''

भूमिका -

''एबोरिजिनल मुख्यतः (सामान्यतः) 'आदिवासी' शब्द का प्रयोग किसी क्षेत्र के मूल निवासियों के लिए किया जाना चाहिए।''[1] लेकिन संसार के विभिन्न भूभागों पर विभिन्न प्रदेशों से आकर लोग बसे हैं। उसे विशिष्ट भाग के प्राचीनतम निवासियों के लिए भी इस शब्द का प्रयोग किया जाता है। आदिवासी लोग अपना जीवन निर्वाह जंगलों, पहाड़ियों, दरियों और सुदूर वनों में करते हैं। अधिकांश लोग प्राथमिक धरातल पर उदरपूर्ति करते हैं। वे सामान्यतः क्षेत्रीय समूहों में रहते हैं और उनका जीवन अनेक दृष्टियों से स्वयंपूर्ण होता है। इनके जीवन में जिज्ञासा का अभाव रहता है। वे प्रकृतिपुत्र होने के नाते अपना जीविकापार्जन सदैव प्रकृति पर करते हैं। सन् 1993 को 'अंतर्राष्ट्रीय आदिवासी वर्ष' कहकर संबोधित किया था। इसके पीछे यह प्रतिपाद्य था कि विश्वभर के आदिवासियों में चेतना लाकर उनके हक्क के लिए उनमें जाग्रत करना था। आदिवासी कौन है ? किन लोगों को आदिवासी कहना सही होगा ? आदिवासियों का अध्ययन करने का महत्त्वपूर्ण कार्य नृविज्ञान (एंथपोलाजी) तथा समाजविज्ञान ने किया है। जिससे एकांत, आदिम, आदिवासियों के विचित्र, रोचक किंतु प्राकृतिक जीवन, रहन-सहन, खान-पान, कला, प्रथाएँ, पर्व एवं त्यौहार, शस्त्र, उनका सांस्कृतिक जीवन आदि अनेक बातों को सारे विश्व को परिचित करने का बहुमूल्य योगदान दिया है।

2.1 सामान्य परिचय -

प्रायः आदिवासियों के पीढ़ियों का वर्णन इतिहास में क्रमशः किंवदंतियों और पौराणिक कथाओं में से हम परिचित हैं। जैसे कि 'रामायण' में 'राबरी', 'पुलिंद', 'दस्यु', 'निषाद', 'किरात', 'वाल्या' (वाल्मिकी) तथा 'महाभारत' में 'एकलव्य' तथा 'शिवाजी' के

---

1. प्र. सं. कमलापति त्रिपाठी - हिंदी विश्व कोश, पृ. 370

समय 'भिल्ल', 'वारली', 'संथाल' लोग ही आदिवासियों के उत्तराधिकारी हैं। आदिवासी लोग प्रकृतिपुत्र होने के नाते 'पशुपक्षियों', 'सूर्य', 'चंद्र', 'धरती', 'जल', 'पत्थर', 'पर्वत', 'झरने', और 'नदी' से जीवन का संबंध स्थापित करके अपना जीवनयापन करते हैं। ''किंवदंतियाँ अलग-अलग हैं और कई हैं; लेकिन सभी में उनका यह विश्वास व्यक्त हुआ है कि वे सृष्टि शुरूआत से इस पृथ्वी के वासी हैं। वे सभ्य दुनिया की चकाचौंध से दूर अब भी पहाड़ों और जंगलों को अपना निवास बनाया हुआ है। प्रकृति से यह रिश्ता उनकी समूची दिनचर्या और तमाम रस्मों, रिति-रिवाजों में प्रखरता से व्यक्त होता है।''[1]

उत्तर और दक्षिण अमरीका, अफ्रीका, ऑस्ट्रेलिया, एशिया तथा अनेक द्विपों और द्वीपसमूहों में आज भी आदिवासियों की संस्कृति के समुदाय दिखाई देते हैं। ''भारत में अनुसूचित आदिवासी समूहों की संख्या 292 है। सन् 1951 की जनगणना के अनुसार आदिवासियों की संख्या 1,91,11,498 है। देश की जनसंख्या 5.36% प्रतिशत भाग आदिवासी लोगों का है।''[2] प्राकृतिक रचना की दृष्टि से भारत संसार का सातवां बड़ा तथा दूसरा सबसे अधिक जनसंख्यावाला देश है। पी. आर. नायडू जी कहते हैं कि ''सन् 1981 की जनसंख्या गणना की अनुसार देश की कुल संख्या 68,51,84,692 है, जिसमें अनुसूचित जनजातियों की संख्या 5,16,28,638 थी। देश में सबसे अधिक आदिवासी मध्यप्रदेश 1,19,87,031, दूसरे स्थान पर उड़ीसा, तीसरे स्थान पर बिहार, चतुर्थ स्थान पर महाराष्ट्र।''[3]

आदिवासियों को प्रजातीय दृष्टि से इन समूहों में नीग्रिटो, प्रोटो, ऑस्टेलायड और मंगोलायड तत्त्व सामान्यतः दिखाई देते हैं। भाषाशास्त्र की दृष्टि से उन्हें ऑस्ट्रो-एशियाई, द्रविड और तिब्बती-चिनी परिवारों की भाषाएँ बोलनेवाले समूहों में विभाजित किया जाता है। प्राकृतिक दृष्टि से भारत के आदिवासियों का विभाजन किया जाता है। प्राकृतिक दृष्टि से भारत के आदिवासियों का विभाजन प्रमुख चार क्षेत्रों में किया है। उनमें उत्तरपूर्वीय क्षेत्र, मध्य क्षेत्र, पश्चिमी क्षेत्र और दक्षिणी क्षेत्र।

---

1. पी. सी. नायडू - भारत के आदिवासी विकास की समस्याएँ, पृ. 8
2. प्र. सं. कमलापति त्रिपाठी - हिंदी विश्वकोश, पृ. 370
3. पी. आर. नायडू - भारत के आदिवासी विकास की समस्याएँ, पृ. 1

2.1.1 उत्तरपूर्वीय क्षेत्र -

इस क्षेत्र के अंतर्गत हिमालय अंचल के अतिरिक्त तिस्ता, उपत्यका और ब्रह्मपुत्रा की यमुना-पद्या-शाखा के पूर्वी भाग का पहाड़ी प्रदेश आता है। इस क्षेत्र के आदिवासी समूहों में गुरूंग, लिंबू, लेपचा, आका, डाफला, अबोर, मिरी मिरागी, सिंगपो, मिकिर, रामा, कचारी, गारो, खासी, नागा, कुकी, लुशाई, चकमा आदि उल्लेखनीय हैं।

2.1.2 मध्य प्रदेश -

इस क्षेत्र के अंतर्गत उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जिले से दक्षिणी की गोदावरी नदी तक हैं। संथाल, मुंडा, उराँव, हो, भूमिज, खड़िया, बिरहोर, जुआँग, खोड़, ज्सवरा, गोंड, भील, बैगा, कोरकू, गारो, खासी, कमार आदि इस भाग के प्रमुख आदिवासी रहते हैं।

2.1.3 पश्चिमी क्षेत्र -

इस क्षेत्र के अंतर्गत भील, ठाकुर, कटकरी आदि आदिवासी निवास करते हैं। पश्चिम राजस्थान से होकर दक्षिण में सह्याद्री तक का पश्चिमी प्रदेश इस क्षेत्र में आता है।

2.1.4 दक्षिणी क्षेत्र -

इस क्षेत्र के अंतर्गत गोदावरी के दक्षिण से कन्याकुमारी तक दक्षिणी क्षेत्र का विस्तार है। इस भाग में जो आदिवासी समूह आते हैं, उनमें चेंचू, कोंडा, रेड्डी, राजगोंडा, कोया, कोलाम, कोटा, कुरूँबा, बडागा, टोडा, काडर, मलायन, मुशुवन, उराली, कनिब्कर आदि आदिवासी समूह रहते हैं।

आदिवासियों का अध्ययन करते समय विदेशी जनजातियों का यहाँ उल्लेख करना जरूरी है। आदिवासी समुदाय के अंतर्गत तस्मानी आदिवासी, आँस्टेलियाई आदिवासी, बुशमैन आदिवासी और एस्किमो आदिवासी आदि जनजातियाँ विदेश में प्रमुखतः दिखाई देती हैं। आदिवासियों का जीवन का अध्ययन करने में सर्वाधिक बहुमूल्य योगदान नृविज्ञान (एंथपोलाजी) तथा समाज शास्त्रज्ञों ने किया है। फलतः इन प्रकृतिपुत्र एवं एकांतवासी आदिम समूहों के विचित्र, रोचक, रहन-सहन, संस्कृति, सभ्यता, कुप्रथा, धार्मिक रूढ़ियाँ, परंपरा आदि अनेक बातों से संसार को परिचित करने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। आदिवासी लोग, यांत्रिकता से दूर, किसी

हद तक पशु-पक्षियों-सा प्राकृतिक जीवन व्यतीत करते हैं। ''आदिवासी लोगों की विशेषता है कि वे नए से भयभीत होते हैं और अपनी पुरानी मान्यताओं से मुक्त होना नहीं चाहते हैं। उनके इस दुराग्रह को समाप्त करने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि उनकी संस्कृति को भली प्रकार समझा जाए और उसके गुण-दोषों का सम्यक् विश्लेषण किया जाए।''[1]

लेकिन आदिवासियों के जीवन में अनेक लोगों ने 'हस्तक्षेप' करके उनका जीवन उच्छृंखलित किया है। जैसे राजनेता लोग और ईसाई धर्मप्रचारकों ने स्वार्थवश उन लोगों का जीवन विस्थापित किया है। सहज, सरल और सहृदयी आदिवासियों के अज्ञान का लाभ उठाकर उनको दिशाहीन करके उनका शोषण तथाकथित लोग कर रहे हैं। यह श्रवणकुमार गोस्वामी जी ने 'हस्तक्षेप' के माध्यम से समाज के सामने प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

2.2 'आदिवासी' शब्द का अर्थ -

'आदिवासी' - (संज्ञा, पु.) (सं.) : मूल निवासी। आदिम निवासी।[2]

'आदिवासी' - स. (पु.) :- 'आदिम वासी'।[3]

'आदिवासी' ''इस शब्द का प्रयोग दो अर्थों में होता है- ऐसे निवासी जो किसी क्षेत्र के मूल निवासी हों और ऐसे निवासी जो प्राचीनतम् निवासी हों। दूसरी कोटि के व्यक्तियों के लिए किसी क्षेत्र का मूल निवासी होना आवश्यक नहीं है, भारत में 292 आदिवासी समूहों की गणना की गई है। आम तौर पर देश की सामान्य धारा से संबद्ध होते हुए भी इनके रीति-रिवाज अब भी भिन्न हैं।''[4]

'आदिवासी (सिन्) - पु. (स. कर्म. स.) 1. किसी देश या प्रांत के वे निवासी जो बहुत पहले से वहाँ रहते आए हों और जिनके बाद और लोग भी वहाँ आकर बसे हैं। आदिम निवासी। 2. आधुनिक भारत में उड़ीसा, बिहार, मध्यप्रदेश आदि पुरानी जनजातियाँ।''[5]

---

1. राजीवलोचन शर्मा - जनजातीय जीवन और संस्कृति, पृ. 11-12
2. सं. नवलजी - नालंदा विशाल शब्द सागर (पृ. 126
3. सं. शरण - दिनमान हिंदी शब्द कोश, पृ. 54
4. प्र. सं. रामचंद्र वर्मा - भारतीय संस्कृति कोश, पृ. 98
5. सं. रामचंद्र वर्मा - मानक हिंदी कोश (पहला खंड), पृ. 164

Aboriginal (आदिवासी) - किसी देश-प्रदेश के वे लोग; जो आदिकाल से वहाँ निवास कर रहे हैं, उन्हें उस देश-प्रदेश का आदिवासी कहा जाता है। आदिवासी उस देश प्रदेश के मूल निवासी होते हैं।[1]

श्री राजीवलोचन शर्मा कहते हैं- कुछ लोग इन जनजातियों को आदिवासी (Aboriginals), काननवासी या जंगली (Forest dwellers), आदिम (Primitive) भी कहते हैं।[2]

भारतीय संविधान आदिवासी को 'अनुसूचित जनजाति' (Scheduled Tribes) कहकर संबोधित करते हैं (किया गया है)।[3]

Tribe (जनजाति) = Tribe, Scheduled = Scheduled Tribe.[4]

इससे स्पष्ट होता है कि 'आदिवासी' शब्द के अनेक अर्थ हैं। आदिवासियों को केवल एक ही नाम से न पुकार कर उसे अनेक नामों से संबोधित किया जाता है। जो लोग मूल से किसी प्रदेश में रहते आए हों और आरंभ से ही वहाँ के निवासी हैं उन्हें ही 'आदिवासी' कहना उचित होगा। जो दरियों में, दुर्गम जंगलों में, वनों में, समूह के साथ रहकर अपनी उदरपूर्ति करते हैं उन्हें ही आदिवासी कहना उचित होगा।

2.3 'आदिवासी' की परिभाषा -

'आदिवासी' की परिभाषा अनेक विद्वानों ने भिन्न-भिन्न प्रकार से की है। जिनमें से ये प्रमुख हैं -

2.3.1 बोअस -

''जनजाति का अर्थ आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र ऐसा जनसमूह, जो एक भाषा बोलता है तथा बाह्य आक्रमण से सुरक्षा करने के लिए संघटित होता है।''[5]

---

1. हरिकृष्ण रावत - समाजशास्त्र विश्वकोश, पृ. 264
2. राजीवलोचन शर्मा - जनजातीय जीवन और संस्कृति, पृ. 90
3. वही, पृ. 90
4. हरिकृष्ण रावत - समाजशास्त्र विश्वकोश, पृ. 413
5. राजीवलोचन शर्मा - जनजातीय जीवन और संस्कृति, पृ. 31

2.3.2 गिलिन और गिलिन -

"जनजाति किसी भी ऐसे स्थानीय समुदायों के समूह को कहा जाता है, जो एक सामान्य भू-भाग पर निवास करता हो, एक सामान्य भाषा बोलता हो और सामान्य संस्कृति का व्यवहार करता हो।"[1]

2.3.3 डॉ. डी. एन्. मजूमदार -

"जन-जाति परिवारों या परिवार-समूहों के समुदाय का नाम है। इन परिवारों या परिवार समूहों का एक सामान्य नाम होता है। ये एक ही भू-भाग में निवास करते हैं, एक ही भाषा बोलते हैं, तथा विवाह, उद्योग-धंधों में एक ही प्रकार की बातों को निषिद्ध मानते हैं। एक-दूसरे के साथ व्यवहार के संबंध में भी इन्होंने अपने पुराने अनुभव के आधार पर कुछ निश्चित नियम बना लिए हैं।"[2]

2.3.4 डब्लू. एच्. आर. रिव्हर्स -

"A Social group of a simple kind, the members of which speak a common dialect, have a single government, and act together for such common purposes as warfare."[3] (आदिवासी जनजाति एक ऐसा सरल-सा समूह है, जिस के सदस्य एक बोली बोलते हों, और जो युद्ध आदि के समय सम्मिलित रूप से कार्य करते हों।)

2.3.5 इम्पीरियल गजेटियर -

"आदिवासी जनजाति परिवारों के एक ऐसे समुदाय का नाम है जिसका एक सामान्य नाम हो, समान बोली हो, जो एक समान भू-भाग पर रहता हो या उस भू-भाग को अपना मानता हो, और जो अपनी ही जाति के भीतर ही विवाह करते हों।"[4]

2.3.6 हरिकृष्ण रावत -

"एक जनजाति परिवारों अथवा परिवार समूहों का एक ऐसा संकलन है जिसका एक सामान्य नाम, विशिष्ट भाषा, समाज व्यवस्था, संस्कृति और उत्पत्ति संबंधी एक पुराकथा

---

1. राजीवलोचन शर्मा - जनजातीय जीवन और संस्कृति, पृ. 3
2. वही, पृ. 31-32
3. Harry S. Ashmore - Encyclopedia Britannica, Vol. 22, P. 465
4. डॉ. शिवतोषदास - भारत की जनजातियाँ, पृ. 75

होती है, तथा जो एक निश्चित भागौलिक क्षेत्र में निवास करता है। एक जनजाति के लोग किसी एक पूर्वज की संतान के रूप में अपने आपको परस्पर संबंधित मानते हैं। बदलती हुई विश्व दृष्टि के कारण 'ट्राइब' अवधारणा के अर्थ में परिवर्तन होता जा रहा है।''[1]

2.3.7 समाजशास्त्र विश्वकोश -

''किसी देश-प्रदेश के लोग जो आदिकाल से वहाँ निवास कर रहे हैं, उन्हें उस देश-प्रदेश का आदिवासी कहा जाता है। आदिवासी उस देश-प्रदेश के मूल निवासी रहते हैं।''[2]

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि आदिवासी याने 'मूल निवासी' वह समान भाषा बोलनेवाला, एक विशिष्ट भू-प्रदेशों पर रहनेवाला प्रकृति से तादात्म्य स्थापित करके स्वच्छंदी जीवन जीनेवाला, समुदाय में रहकर अपनी उदरपूर्ति करनेवाला समुदाय 'आदिवासी' कहा जाता है।

2.5 आदिवासी : जीवन का स्वरूप -

प्रायः 'आदिवासी' यह शब्द सुनते ही हमारे सामने यह तस्वीर उभर जाती है कि जंगली, असहाय, हीन-दीन, दुर्बल, अभावग्रस्त, शोषित, दमित एवं अत्यंत कठिन परिस्थितियों में जंगलों में रहनेवाला, अर्धनग्न, कुप्रथाओं की बर्बरता से पीड़ित वनों पर ही अपनी उदरपूर्ति करनेवाला, सभ्य समाज की चकाचौंध से दूर जंगल, पर्वतों पर, दरियों में सुदूर वनों में रहनेवाली जनजाति या समुदाय को ही हम 'आदिवासी' कहते हैं। उसे आधुनिक समाज से कोई लेना-देना नहीं होता। आदिवासी अनेक प्रकार की प्रतिकुलताओं से संघर्ष करते हुए प्राकृतिक परिवेश से तादात्म्य स्थापित करके स्वच्छंदी जीवन जीनेवाले लोगों को ही आदिवासी कहा जाता है। वह प्रकृति पुत्र होने के कारण अकारण ही जंगलों को हानि नहीं पहुँचाते। उनमें संचय करने की प्रवृत्ति नहीं होती, वनों को सुरक्षित रखने में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। उनके जीवन में कई महत्त्वपूर्ण बातें होती हैं। वह निम्नलिखित प्रस्तुत हैं -

---

1. हरिकृष्ण रावत - समाजशास्त्र विश्वकोश, पृ. 413
2. वही, पृ. 1

2.5.1 आर्थिक जीवन -

आदिवासियों का आर्थिक जीवन उनकी भौगोलिक परिवेश से ही निर्धारित रहता है। अस्सी प्रतिशत से भी अधिक आदिवासी लोग वनों पर ही निर्भर होते हैं। आसपास के जंगल, जमीन और पहाड़ के पानी से ही अपना काम चलाते हैं। आदिवासियों के आर्थिक जीवन में शिकार करना, मछली पकड़ना, मकान बनवाना, पशुपालन करना, पशुपक्षियों की शिकार करके उनके दंत, शिंग आदि की बिक्री करना, खेती के लिए जमीन तैयार करना ये सभी कार्य समुह के बलबूते पर ही चलाते हैं। जो कि वनों से कंदमूल, शहद, डिंक, जड़ीबुटियाँ, लकड़ी, घास और वनौषधी ले जाकर साप्ताहिक हाट में बेचकर उसके बदले में अपनी जरूरतों की चीजें हाट से लाते हैं। इस तरह इनका आर्थिक जीवन वृक्षों पर निर्भर रहता है।

2.5.2 सामाजिक जीवन -

आदिवासियों के सामाजिक जीवन के संबंध में यह कहा जाता है कि सहयोग से सामाजिक जीवन जीते हैं। उन्हें कोई भी कार्य करने से पहले समुदाय के मुखिया को पूछना होता है। समुदाय में काम बहुत कुशलता के साथ किया जाता है। आदिवासियों में अपार सहनशक्ति होती है। जीवन के प्रति उनका दृष्टिकोण स्वच्छंदी और आराम से बिना किसी झंझट से जीवन का आस्वाद लेने का आदि होता है। आदिवासी अपने भाग्य पर ज्यादा विश्वास करता है। अपनी परेशानियों को भुलाने के लिए वह मद्य, हास्य, नृत्य एवं संगीत का सहारा लेता है। उनके जीवन के हर एक घटना या प्रसंगों में मद्य, नृत्य और मांस का होना अनिवार्य माना जाता है। आदिवासियों के परिवार में जन्म से लेकर मृत्यु तक जो विधी या संस्कार किए जाते हैं वह सामुदायिक रीति से ही संपन्न किए जाते हैं। किसी भी पर्व एवं त्यौहार मनाते समय समुदाय के सभी लोग इकट्ठा होकर, नृत्य, संगीत और मद्य के बिना उनका कोई कार्य पूर्ण नहीं होता। मद्य उनके जीवन का अनिवार्य अंग है। इस तरह आदिवासियों का सामाजिक जीवन होता है।

2.5.3 धार्मिक जीवन -

आदिवासी अंधविश्वासी होने के कारण वे देवी-देवताओं को प्रसन्न करने के लिए पशु-पक्षियों की बलि चढ़ाते हैं। साथ-साथ नरबलि देने की भी अनिष्ठ प्रथा आदिवासियों में प्रायः

देखी जाती है। उनके जीवन में जन्म से लेकर मृत्यु तक अनेक अलौकिक शक्तियों का प्रभाव होता है। भूचाल, अकाल, रोगों का प्रादुर्भाव, भूखबली, महामारी, भोजन का अभाव, शिकार का अभाव, कंदमूल न मिल रहे हो तो आदिवासी लोग समझते हैं कि उन्हें देवी-देवताओं का प्रकोप सहना पड़ रहा है। ऐसी गलत धारणा आदिवासियों में हो जाती है। आदिवासी लोग देवी-देवताओं को प्रसन्न करने के लिए पशु-पक्षियों को नरबलि देते हैं और किसी स्त्री को 'डायन' संबोधित करके उसकी हत्या भी की जाती है। इनका जीवन अनेक अलौकिक शक्तियों के प्रभाव का जादू और टोटम पर ज्यादा होता है। लेकिन यह लोग यह नहीं जानते कि अज्ञानवश गरीबी, अभावग्रस्तता से पीड़ित हैं। उन्हें आधुनिक सभ्यता की चकाचौंध से दूर रहने से ही ऐसी कठिनतम् परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। आदिवासी लोग जात, पात, वर्ग नहीं मानते। लेकिन अब कहीं-कहीं जगह पर वर्ग-भेद भी दिखाई देने लगा है। किसी कुल या गोत्र से विवाह के संबंध स्थापित करना नहीं चाहते। उनके जीवन के प्रमुख बातों का यहाँ जिक्र करना जरूरी है। वह निम्नलिखित है -

2.5.3.1 निवासस्थान -

मनुष्य के जीवन में तीन चीजों को बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। वह है- रोटी, कपड़ा और मकान। प्रायः आदिवासी लोग दुर्गम पहाड़ों की चोटियों, वनों, जंगलों तथा बड़ी-बड़ी दरियों में रहना पसंद करते हैं। आदिवासी बाह्य आक्रमणों से अपने को सुरक्षित रखने के लिए ऐसे स्थानों का निवासस्थान के लिए चुनाव करते हैं। आदिवासी लोग मकान बनवाने के लिए लकड़ी, घास और फूस की सहायता लेते हैं। जो जंगल में मकान बनवाने के लिए सहजता से उपलब्ध होता है, उसी से ही अपना मकान बनवाना अधिक पसंद करते हैं। उनके मकान प्रायः आकार की दृष्टि से कभी-कभी बड़े भी होते हैं और छोटे भी। उनके मकानों में हमारी जैसी खिड़कियाँ एवं बड़ी-बड़ी दीवारें नहीं होती। इसलिए उनमें प्रायः अंधेरा ही छाया रहता है। जारों की तुफान या बारिश आती है, तो वह ढह-बह जाती है या घास की छत उड़ भी जाती है। आदिवासी के मकान इस तरह के होते हैं।

2.5.3.2 खान-पान -

आदिवासी लोग जंगल से जो फल-फुल, कंदमुल, कडूकंद, महुआ के फूल, मछलियाँ, खरगोश, मुर्गी तथा जंगली प्राणियों का गोश्त सेवन करते हैं। गोश्त भूनकर भी कच्चा खाते हैं। बकरी, सुअर, मुर्गा, बत्तख, केकड़ा, कछुआ, कोरो, कुट्टी, मक्के का पेज, मद्य आदि खाते हैं। कुछ त्यौहारों पर यह लोग कोदो, कुटकी, धान, सांवा, मक्का, ज्वार, चावल का माड़ बनाकर खाते हैं। आदिवासी लोग मका, ज्वार, पिसी और आटे की रोटी तीज-त्यौहार पर विशेष रूप से बनाते हैं। वे महुआ, गोंद, चिरौजी, बैर, मकई, इमली के पत्तों आदि को उबालकर भी खाते हैं। भोजन की मात्रा भी बहुत कम होती है। चूहा, बंदर, शेर, साँप आदि का भी आदिवासी गोश्त खाते हैं। जहरीले साँपों का मांस विषहीन करके खा जाते हैं। बहुत कठिनाई से चावल, दाल, आलू, कुम्हड़ा खेती में उपजाते हैं। इनकी उदरपूर्ति प्रायः जंगलों से जितना सहज उपलब्ध हो उस पर ही उनका खान-पान निर्भर रहता है। दारू उनका पसंदिदा पेय है। यह भी उनके खान-पान की खास विशेषता मानी जाती है।

2.5.3.3 वेशभूषा -

रोटी, कपड़ा और मकान मनुष्य की प्राथमिक आवश्यकताएँ हैं। इसके बिना मनुष्य का जीवन निरर्थक और अर्थहीन है। लेकिन वस्त्र मनुष्य की संस्कृति और सभ्यता की पहचान है। अलग-अलग प्रांतों एवं प्रदेशों में रहनेवाला व्यक्ति उनकी वेशभूषा से सहज ही पहचाना जा सकता है। सभी देशों में लोगों का वस्त्रविन्यास एवं शृंगार अलग-अलग दिखाई देता है। लेकिन पहले आदिवासी लोग नग्नावस्था में ही रहते थे। धीरे-धीरे उनमें विकास होता चला और वह अपना तन ढँकने के लिए पेड़ों के पत्ते, खाल और पशुओं की खाल आदि का इस्तमाल करने लगे। पशुओं की खाल से शरीर ढक लेते थे। इसलिए जेवर आदि का कोई प्रश्न ही नहीं उठता है, किंतु ये सीपी या शंख के हार बनाकर पहनने के शौकीन होते हैं। चकमक पत्थर के पैने टुकड़ों से शरीर में दाग बनाकर शरीर को सजाते थे। प्राचीन काल से आदिमानव कमर में पत्ते या खाल लपेट लेते थे। यही मानव का सबसे पहला प्राचीन वस्त्र माना जाता है। अब आदिवासी प्रायः कपड़ों का प्रयोग करने लगे हैं। विभिन्न जनजाति समूहों की पारंपारिक वेशभूषा की अपनी अलग-अलग पहचान दिखाई देती है।

आदिवासियों के कई प्रकार के गहने दिखाई देते हैं। चांदी, कासा, पीतल, गिलट तथा तांबे से शरीर पर आकर्षक करनेवाले गहने भी पहनाए जाते हैं। आदिवासी कन्याएँ या औरतें भी विभिन्न प्रकार की रंगों की मोतियों की मालाओं को बड़े शौक के साथ उसे पहनती हैं। नृत्य, उत्सव, पर्व एवं त्यौहार हो या जन्मोत्सव हो किसी का विवाह हो सभी आदिवासी स्त्री, पुरुष, युवक-युवतियाँ और बच्चों का विशेष वेशभूषा एवं साज-शृंगार हमें देखने को मिलता है। धार्मिक पर्व एवं उत्सव में उनकी वेशभूषा देखते ही मन मोह लेता है।

2.5.3.4 संस्कार की विधियाँ -

आदिवासियों में संस्कारों को महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। रीति-रिवाजों के द्वारा निर्धारित व्यवहार को संस्कार कहा जाता है। बहुत-सी आदिवासी समुदाय में ईश्वरपूजा तथा अन्य धार्मिक कार्यों से ही संस्कार को संबोधित किया जाता है तथा जो निर्धारित संस्कारों का अनुगमन नहीं करते हैं, वे दंड के भागी बन जाते हैं। सामाजिक तथा धार्मिक, जन्म संस्कार, पर्व-त्यौहार, उत्सव, मृतक संस्कार, भोज देना, शादी-ब्याह के विधि, पुत्रजन्मोत्सव आदि अनेक अवसरों पर पूर्वजों द्वारा जो निर्धारित विधि-निषेधों का पालन किया जाता था, उसका पालन करना आदिवासियों में अनिवार्य बात मानी जाती है। जन्म से मृत्यु तक मनुष्य पर संस्कार मँडराते रहते हैं। संस्कार की विधियाँ ही आदिवासियों की असली पहचान है।

2.5.3.5 युवागृह -

आदिवासियों के जीवन में युवागृहों को भिन्न नामों से पहचाना जाता है। भारत की जनजातियों में युवागृहों की प्रथा पायी जाती है। वहाँ वे इकट्ठा होकर मनोरंजन आदि कार्य करते हैं। '' 'मुंडा' तथा 'हो' जनजाति में इसे 'गितिओडो' कहते हैं। उरांव इसे 'जोखेरषा' या 'धुमकुडिया' कहते हैं। 'भुइयां' इसको 'धागर बासा' कहते हैं तथा गोड़ 'घोटुल' कहते हैं, आवो 'लोठा' तथा सेमा नागा इसको 'मोरंग' कहते हैं तथा अंगामी नागा इसको 'किचुकी' के नाम से पुकारते हैं। तांग खुल नागा पुरुषों के युवा-गृह को 'मेयर लांग' तथा लड़कियों के युवागृह को 'नगला लांग' कहते हैं।''[1] 'घोटुल' या 'युवागृहों' में चार एवं पाँच साल के लड़की हो या लड़कों को प्रवेश मिलता है। उनके लिए नियमित रूप से उपस्थित रहना अनिवार्य होता है। अनुपस्थित

---

1. प्र. सं. मोटूरि सत्यनारायण - विश्व ज्ञान संहिता, पृ. 506

होने पर दंड भी दिया जाता है। युवागृह की सदस्यता विवाह होने के पहले तक ही कायम रहती है। विवाह के बाद युवागृह की सदस्यता छीन जाती है। युवागृह के सदस्यों का काम, शादी, उत्सव पर्व, त्यौहार, मकान बनवाना, धान कुटना आदि अनेक अवसरों पर गाँववालों की मदद करना होता है। प्रत्येक आदिवासी जनजातियों का अलग-अलग गाँवों में नजदीक ही स्वतंत्र झोपड़ी में 'घोटुल' या युवागृह बनाया जाता है। 'घोटुल' में अपनी पसंद की लड़का हो या लड़की से कोई भी युवक या युवतियाँ संबंध स्थापित करके वह समाज के मुखिया से मान्यता लेकर उससे शादी कर सकते हैं। यह आदिवासियों की अपनी खास विशेषता मानी जाती है।

2.5.3.6 साप्ताहिक बाजार -

आदिवासियों के जीवन में साप्ताहिक बाजार का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। यह बाजार केवल न उनकी आर्थिक स्तर की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है बल्कि उनकी सामाजिक, सांस्कृतिक एवं अन्य जरूरतों की भी पूर्ति करता है। जहाँ तक आर्थिक आवश्यकताओं का सवाल होता है, तो आदिवासी बाजार में उन लोगों को अपनी वस्तुओं को बेचते हैं और किसी वस्तु के बदले उन्हें अपनी वस्तु देते हैं। यहाँ वस्तुविनिमय पद्धति का अवलंब करते हैं। प्रायः वनों से प्राप्त शहद, घी, डिंक, कंदमूल, औषधी, जड़ी-बुटियाँ, खेती से प्राप्त हुई फुलों, फलों, हाथ से बुनी हुई वस्तुओं को बेचकर या उसके बदले में अपनी जरूरतों की वस्तु को लेकर आते हैं। इससे अपनी आवश्यकताओं की चीजें जैसे की, तेल, नमक, कपड़े, मसाले आदि की बिक्री करके लाते हैं। इसलिए साप्ताहिक बाजार उनके जीवन में महत्त्वपूर्ण होता है।

2.5.3.7 जंगल का महत्त्व -

आदिवासियों का जीवन वनों पर ही प्रायः निर्भर रहता है। इसका प्रमुख कारण उनके जीवन में जंगल का अनन्य साधारण महत्त्व होता है। इसी कारण ज्यादातर जनजातियाँ जंगल में निवास करती दिखाई देते हैं। वनों से आदिवासियों को निम्नलिखित लाभ होते हैं। ज्यादातर आदिवासी लोग दुर्गम पहाड़ों पर या सुदूर वनों में निवास करते हैं। आदिवासी लोग अस्थिर खेती के लिए, शिकार की सुविधा की दृष्टि से उनके जीवन में जंगल का महत्त्व है। वैसे ही मछली पकड़ने के लिए सुविधा होती है, चरागाह एवं पशुपालन के लिए उपयुक्त जमीन का होना, अच्छा

जलवायु का होना, मकान बनवाते समय सामग्री प्रायः वनों से ही उपलब्ध करते हैं। जंगल से कंदमूल, बीट, शहद, घी, तेंदूपत्ता, फल, फूलों, औषधी जड़ी-बुटियों को इकट्ठा करने के लिए उन्हें वन पर ही निर्भर रहना पड़ता है। जंगलों से 'महुआ' के फूल इकट्ठा करके उसका मद्य बनाना आदि अनेक चीजें वनों से सहजता से उन्हें प्राप्त होते हैं।

2.5.3.8 उत्सव-पर्व एवं त्यौहार -

आदिवासी की सभी जनजातियाँ अपने-अपने धार्मिक पर्व और उत्सव पूरे उत्साह के साथ मनाते हैं। होली, दिवाली, दशहरा, पितृपूजा आदि करते हैं। आदिवासी चाहे वह किसी भी समुदाय के हो सभी अपनी संस्कृति और सभ्यता के अनुरूप उत्सव एवं त्यौहार अपने सामाजिक धार्मिक नियम के आधार पर उसका अवलंब करते हैं। पर्व-त्यौहार के अवसर पर इनका उत्साह देखते ही बनता है। इनकी धार्मिक भावना उनके नृत्यकला एवं संगीत कला में दिखाई देती है। अपने देवी-देवताओं के प्रति आस्था भी वह प्रकट करते हैं। आदिम, जंगली, दुर्बल, हीन-दीन कही जानेवाली आदिवासी जाति में अपने उत्सव-पर्व एवं त्यौहारों में आस्था एवं निष्ठा झलकती है। आदिवासी लोग अपने पारंपारिक त्यौहार, आखातीज, होवणमाता की चलावणी, सावणमाता की जातर दिवासा, नवई, नवबी, भगौरियाँ गाय, गोहरी, गलगढ़ आदि अनेक त्यौहार आदिवासी मनाते हैं। उनका कोई भी उत्सव एवं पर्व दारू के बिना नहीं हो सकता। महुआ के फूलों की दारू हो या चावल की दारू उनके जीवन का अविभाज्य घटक मदिरा ही है। 'मदिरा' को विशेष महत्त्व उनके उत्सव-पर्व एवं त्यौहारों में है।

2.5.3.9 दारू का महत्त्व -

आदिवासियों के जीवन में दारू का अनन्य साधारण महत्त्व है। दारू उनके जीवन की अनिवार्य चीज है। जन्म से लेकर मृत्यु तक दारू का साथ आदिवासियों में होता है। दारू के बिना उनके जीवन का कोई भी कार्य पूर्ण नहीं होता। बच्चा जन्म लेते ही उसके मुँह में शराब की एक बूँद छोड़ी जाती है। वैसे ही मृत्यु के समय भी उसके मुँह में शराब उँड़ेल देना वह रस्म अदा करना मानते हैं। कोई भी उत्सव-पर्व एवं त्यौहार हों, जन्मोत्सव, शादी-ब्याह, कोई धार्मिक कार्य हो, कोई सामाजिक कार्य हो उसमें दारू का होना अनिवार्य होता है। दारू कई प्रकार की चीजों से

बनाई जाती है। जैसे की चावल से, ताड़ी से, महुआ के फूलों से, गन्नों से, अंगुर से आदि अनेक चीजों से दारू बनाई जाती है। वह बच्चों से लेकर, औरतें, पुरुषों और बुढ़ों को सेवन करना अच्छी बात आदिवासियों में मानी जाती है। इसके कई दुष्परिणाम भी उनके जीवन में दिखाई देते हैं, फिर भी वह लोग नशा-पान करना अपनी परंपरा का निर्वाह करना मानते हैं।

2.5.3.11 परिवार -

आदिवासियों में दो प्रकार के परिवार होते हैं - 1) संयुक्त परिवार और 2) दूसरा विभक्त परिवार। संयुक्त प्रणाली के परिवार में पितृसत्ताक व्यवस्था होती है। परिवार का मुखिया पिता होता है। प्रायः एक ही परिवार में माता, पिता, संतानें तथा विवाहित पुत्रों की पत्नीयाँ और उनके बच्चे भी रहते हैं। परिवार का सबसे बड़ा एवं बूढ़ा व्यक्ति परिवार का मुखिया होता है। परिवार के समस्त सदस्य सामूहिक रूप से उत्पादन और अर्थोपार्जन करते हैं। परिवार में सब की आय इकट्ठा की जाती है और परिवार के मुखिया के निर्देशानुसार उसका व्यय (प्रयोग) किया जाता है। आदिवासियों के संयुक्त परिवार में घर का एक भाग पूर्वजों की पूजा के लिए सुरक्षित रखा जाता है। वहाँ औरतों को जाने की मनाई होती है। उसकी पूजा विधी परिवार का मुखिया ही करता है। परिवार में आदिवासियों की औरतों का भी महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। वह पुरुषों की तरह जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में उनको सहयोग देती है। कृषि, हस्तकला, गृहनिर्माण, आमोद-प्रमोद, घर आदि से संबंधित कामकाजों में औरतें पुरुषों के साथ हाथ बाँटती हैं। साथ-ही-साथ कृषि, शिकार, गृह-निर्माण आदि के कामों में समस्त परिवार के सदस्य सामूहिक रूप से उस काम को पूरा कर देते हैं। परिवार में मुखिया अपने विवेक और इच्छा के अनुरूप कार्य करता है। अधिकांश मुखिया कोई गंभीर समस्या उत्पन्न होती है तो वह बस्ती के बड़े-बुजर्गों से मशवरा करता है और सही मार्ग उससे खोज लेता है। आदिवासियों में लड़कों का विवाह होने के बाद उसका स्वतंत्र मकान बनाने की भी पद्धति है। लेकिन उसके सारे काम परिवार के मुखिया के निर्देशों पर ही चलते हैं। आदिवासियों में कहीं-कहीं पर मातृसत्ताक कुटुंब व्यवस्था होती है। वहाँ उस स्त्री के अनुसार परिवार के सब काम पूर्ण होते हैं। उसकी उत्तराधिकारी उस घर की सबसे छोटी लड़की होती है। लेकिन यह प्रथा कम ही समुदाय में दिखाई देती है। इस तरह की आदिवासियों में परिवार या कुटुंब व्यवस्था होती है।

2.5.3.12 वाद्य -

आदिवासियों के पारंपारिक वाद्य आज भी उनकी पहचान बनती हैं । आदिवासियों के वाद्यों के बारे में अनेक मिथकों से और उनकी उत्पत्ति उनके देवी-देवताओं से हुई है ऐसा माना जाता है। आदिवासियों के कई तरह के वाद्य बताए जाते हैं। उनमें फूँक से, चर्म से, तार से बजाये जानेवाले वाद्य और इन तीनों से सम्मिलित कई वाद्य बनाये गए हैं। 1) फूँक से बजाये जानेवाले वाद्यों में प्रमुख हैं- बाँसुरी, अलगोजा, मोहरी, शंख, मसक आदि हैं। 2) चर्म से बनाये हुए वाद्य ढोल, ढोलक, चंग, मृदंग, टिमकी, मांदर, तारपा आदि हैं। 3) तार से बनाए हुए- एकतारा, शहतीरा बाना आदि हैं और मिश्रित वाद्यों में - कमाचेया, सारंगी, रूं,रूं, बाज आदि हैं। जिनमें लकड़ी, चमड़ा, तार आदि भी अनेक मिश्रित वाद्य हैं। ''आदिम जाति के लोग अपने सभी पारंपारिक वाद्यों के स्वयं निर्माता और वादक हैं।''[1] आदिवासी लोग अपनी प्रतिभा के आधार पर लकड़ी बाँस, फल, तांत, धातु, बाल, नारियल, चमड़ा, रस्सी, तार, पत्ता, गोंद, सरस, रंग एवं मिट्टी आदि से भी वाद्य का निर्माण करते हैं और उनके मूल स्वर के अनुरूप करके उसे बनाते हैं। गाय-भैंस, बकरी चरानेवाले बाँसुरी बजाते हैं। ढोलक बजानेवाले का बेटा ढोल ही बजाता है । आदिवासियों में वाद्य बजाने की कला उनको परंपरा से ही अवगत होती है । आदिवासियों में कोई भी उत्सव-पर्व एवं शादी-ब्याह, त्यौहार, जन्मोत्सव, पितरों की पूजा, मृतक पूजा आदि कोई भी उत्सव हो उसमें वाद्यों का बजाना अनिवार्य होता है। ढोल और मोहरी प्रायः शादी के मांगलिक अवसरों पर वाद्य बजाते हैं। ढाँक, डमरू, डफ, शंख, घड़ी-घंटाल, नगाड़ा, शहनाई, धौंसा, सिंगाडिया, मसक आदि अनेक वाद्य हैं। विविध अवसरों या देवी-देवताओं की पूजा करनी होती है तो यह वाद्य भी बजाते हैं। इस प्रकार आदिवासियों के अनेक प्रकार के वाद्य-प्रकार दिखाई देते हैं।

2.5.3.13 नृत्य -

आदिवासी जीवन का नृत्य अभिन्न अंग है। आदिवासी का कोई भी उत्सव एवं पर्व नृत्य के बिना संपन्न नहीं होता। उनके जीवन को प्रभावित करने में प्रकृति की सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका है। नदियों, झरना, पर्वत, पशु-पक्षी, पृथ्वी, वृक्ष, सूर्य-चंद्र आदि अनेक शक्तियों से

---

1. वसंत निरगुणे - लोक संस्कृति, पृ. 84

उनका संबंध होता है। आदिवासियों के समूह नृत्यों की परंपरा निव्याहत से शुरू है। आदिवासियों में समूह में स्त्री और पुरुषों का नृत्य करना अनिवार्य होता है। सामूहिक नृत्य करने के पीछे उनकी एकता का एहसास होता है। समूह नृत्य करने में उनकी गहरी रुचि दिखाई देती है। आदिवासियों में मंडलाकार आवर्ती नृत्यों की परंपरागत रूप दिखाई देते हैं। "भारतीय आख्यानों में नृत्य उत्पत्ति का आदिम उल्लास तांडव को माना जाता है।"[1] तांडव आदिवासियों का आदिम नृत्य माना जाता है। आदिवासियों की मिथकथाओं में लिंगों और बड़े देव के विभिन्न रूपों का वर्णन मिलता है। इसलिए शिव की उपासना वे लोग करते हैं। शिव विश्व के पहले युग-पुरुष माने जाते हैं जिन्होंने नृत्य की उत्पत्ति की है। आदिवासियों में प्रमुख देवताओं का वास वृक्षों में होता है। इसलिए वे सामूहिक नृत्य करते समय शिव की उपासना करते हैं। अनेक आदिवासी में यह प्रथा है। उनके नृत्यों में भाव-भंगिमा का भावानुकरण होता है। आदिवासी नृत्य उनकी संस्कृति का संवाहक होता है। वह एक प्रकार से सामूहिक भावना के प्रबल द्योतक हैं। आदिवासी युवक या युवती अपने मन की भावना को प्रकट करने के लिए नृत्यों का आधार लेते हैं। अपनी बात कहने का यह बड़ा मौका उन्हें नृत्यों से मिलता है। पूरी रात भर नृत्य करने की प्रथा आदिवासियों में होती है। जैसे की भांगड़ा नृत्य, संपेरा नृत्य, करमा नृत्य, भगोरिया नृत्य, थापटी नृत्य, देवी नृत्य, पाठ-पूजन, बलि के साथ नृत्य, गीत आदि देवी-देवताओं को प्रसन्न करने के लिए किया जाता है। आदिवासी नृत्य उनकी कला का प्रामाणिक दस्तावेज है। मिट्ठी या काष्ट के मुखौटे लगाकर भी नृत्य करने की प्रथा है। स्वांग रचना, किसी सावकार या दरोगा की नकल कराना आदि लोकनृत्य भी आदिवासी करते हैं। इस तरह आदिवासियों में नृत्यों को अनन्य साधारण महत्त्व है। नृत्य आदिवासी जीवन का अनिवार्य अंग है। नृत्य आदिवासी जीवन का प्राण है। प्रायः नृत्य उनके जीवन का एक मुख्य अंग बन चुका है। आदिवासियों के जीवन में नृत्य को महत्त्वपूर्ण स्थान है।

निष्कर्षतः आदिवासी जीवन का अध्ययन से पता चलता है कि आदिवासी का जीवन विविधांगी बन चुका है। उनका जीवन प्रकृति से तादात्म्य स्थापित करके प्रतिकूल परिस्थितियों में उदरपूर्ति करते हैं। आदिवासी लोग स्वच्छंदी जीवन जीने के आदी हो गए हैं। आदिवासी प्रकृति में प्राणार्पण करते हैं। इसलिए उन्हें 'प्रकृति पुत्र' कहा जाता है। वे अपनी

---

1. वसंत निरगुणे - लोकसंस्कृति, पृ. 88

संस्कृति के धरोहर हैं। उनमें संचय करने की प्रवृत्ति कतई नहीं होती। आदिवासी जीवन में सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, आश्रयस्थल, खान-पान, वेशभूषा, संस्कार की विधियाँ, लोक जीवन, युवागृह, साप्ताहिक हाट, जंगल का महत्त्व, दारू, विवाह का महत्त्व, आदिवासी प्रथाएँ, परिवार, वाद्य, नृत्य आदि को बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रायः आदिवासियों का जीवन इस प्रकार दिखाई देता है।

2.5.4 विवेच्य उपन्यास का आदिवासी जीवन -

'हस्तक्षेप' श्रवणकुमार गोस्वामीजी का नवीनतम् उपन्यास है। इसमें आदिवासी जीवन का वर्णन किया गया है। आदिवासियों का जीवन हर प्रकार की प्रतिकूलताओं से संघर्ष करते हुए प्राकृतिक परिवेश से तादात्म्य स्थापित करके स्वच्छंद जीवन जीनेवाले लोगों के जीवन को लेखक ने उपन्यास का आधार बनाया है। आदिवासियों का जीवन अत्यंत कष्टप्रद, हीन-दीन, उपेक्षित, नग्नावस्था में, भूख से पीड़ित, शोषित एवं दमित होने के कारण पिछड़ा हुआ है। आज भी आदिवासी लोग वर्ष के चार मास अर्धपेट अपना जीवन जी रहे हैं। आदिवासियों के जीवन में नृत्य, मदिरापान, परंपरा का निर्वाह को बड़ा महत्त्व है। आज का आदिवासियों का जीवन आर्थिक अभाव, सामाजिक दुराव, भ्रष्टाचार, जातिवाद और गुटबंदी में फँसा हुआ है। श्रवणकुमार गोस्वामीजी ने आदिवासी जीवन का महानगरीय चित्रण करते समय उनके जीवन के समग्र चित्र को सामने रखा है।

"आदिवासी !

बहुत ताकत है इस शब्द में। इसके भीतर अनंत संभावनाएँ छिपी हुई हैं। इस शब्द का सहारा लेकर योग्यता न रखनेवाले लोग भी बड़े-बड़े विद्वान बन गए। स्वयंसेवी संस्थाएँ इस शब्द को अपने नाम के आगे जोड़कर खूब चांदी काट रही हैं। बार-बार इस शब्द को उछालकर हमारी राज्य तथा केंद्र सरकारें वाहवाही लूटती रही हैं। आदिवासियों के कल्याण के नाम पर लोग करोड़ों रुपयों की लूट हर वर्ष करते हैं।"[1] इससे यह पता चलता है कि आदिवासियों के कल्याण, संस्कृति, विकास के नाम पर कई प्रकार के व्यापार आज लोगों ने शुरू किए हैं। आदिवासियों को उपभोग्य की वस्तु बनाकर उनका किस तरह विक्रय करने का प्रयास सिर्फ राजनेता, पुलिस, वकील,

---

1. श्रवणकुमार गोस्वामी - हस्तक्षेप, पृ. 167

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY KOLHAPUR

गैर आदिवासी, बुद्धिजीवी लोगों ने ही नहीं किया बल्कि आदिवासियों के नेता कहे जानेवाले लोगों ने भी किया है। इसका यथार्थ चित्रण लेखक ने प्रस्तुत उपन्यास में किया है। वह निम्नलिखित प्रस्तुत है-

2.5.4.1 प्रकृति चित्रण -

श्रवणकुमार गोस्वामी जी ने प्रकृति का चित्रण अत्यंत मनोहारी ढंग से प्रस्तुत किया है। 'गगनांचल' का वर्णन करते समय कहते हैं कि इस इलाके में एक तरफ जंगल है तो दूसरी तरफ मनोहारी दृश्यों का खजाना भी है। यदि एक तरफ नदियों का कल-कल निनाद है तो दूसरी तरफ यहाँ के आदिवासियों का मधुर आदिवासी संगीत है। गगनांचल धरती के भीतर दौलत छिपी हुई है, तो इस धरती के ऊपर रहनेवाले आदिवासियों के पास एक बहुत बड़ी संपदा भी है, आदिवासियों की संस्कृति। प्रकृति चित्रण करते समय लेखक ने पूर्णिया के चाँद का भी वर्णन अत्यंत मनोरम ढंग से प्रस्तुत किया है। इसके साथ ही रामडेरा गाँव का चित्रण भी लेखक ने किया है। जब करमा रामडेरा गाँव आदिवासी साहित्य में लिखा महाकाव्य लेने के लिए जाता है। रामडेरा गाँव का वर्णन किया है। आज भी आदिवासी लोग कष्टप्रद एवं अत्यंत दुर्गम पहाड़ियों में अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं। रामडेरा गाँव जाते समय 'शंख नदी' को पार करना होता है। उसका रास्ता उबड़-खाबड़, पथरीला अत्यंत दुर्गम है। वहाँ कोई बस्ती नहीं है। वह निर्जन प्रदेश है। वहाँ चारों ओर भयावह सन्नाटा फैला है। आस-पास कोई पशु-पक्षी यहाँ दूर-दराज तक दिखाई नहीं देता है। न कोई पशु है न कोई आदमी दिखाई देता है। शंख नदी का पानी शांत और गतिहीन लग रहा था। पहाड़ी नदियों की विशेषता होती है कि वे ऊपर से शांत-गंभीर लगती हैं, पर उनके भीतर अंतर्धारा प्रवाहित होती है। लेखक कहता है कि "जो पहाड़ी नदियों की इस प्रकृति से परिचित नहीं होते, वे अकसर धोखा खाया करते हैं और कभी-कभी ऐसे लोग अपनी जान भी गँवा बैठते हैं।"[1] आदिवासी दुर्गम पहाड़ी प्रदेशों में निर्जन एवं सभ्यता की चकाचौंध से दूर रहना पसंद करते हैं। शंख नदी के आस-पास का प्रदेश बालुका राशिमय ही है। वहाँ कुछ भी नया नहीं दिखाया जाता है। प्रकृति चित्रण में विश्रामागार के जलप्रपात का भी वर्णन अत्यंत मनोहरी बन पड़ा है। गगनांचल को लोग प्रकृति पुत्र मानने की वजह यह है कि शाल के लंबे-लंबे वृक्ष और उनके

---

1. श्रवणकुमार गोस्वामी - हस्तक्षेप, पृ. 66

बड़े-बड़े पत्ते जो मनोरम दृश्य और अद्‌भूत नजारों की सृष्टि से ही होती हैं। महुआ ने जंगल पहाड़ तो देखे थे। लेकिन उसने शाल का जंगल वह पहली बार ही देख रही थी। इस तरह प्रकृति का वर्णन अत्यंत सुंदर, मनोहारी और चित्ताकर्षक रूप में लेखक ने यहाँ प्रस्तुत किया है।

2.5.4.2 आश्रयस्थलं एवं निवासस्थान -

'हस्तक्षेप' उपन्यास में लेखक ने आदिवासियों का निवासस्थल एवं आश्रयस्थलों का वर्णन करते समय उन्होंने महानगरों में स्थित करमा भगत जी के निवासस्थल का वर्णन किया है। वहाँ लेखक ने एक ही स्थान पर महानगर के जीवन का भी नजारा और गाँव का भी नजारा (दृश्य) चित्रित किया है। बिरसी भगत जो कि अवकाश प्राप्त हेडमास्तरनी आदिवासी है। लेकिन उन्होंने अपने आवास में गोबी की खेती करके हर साल अच्छी आमदनी प्राप्त करती है। गोंदली में वह रहती हैं। गोंदली में अब करोडपतियों की बड़ी-बड़ी कोठियाँ ही नजर आती हैं। लेकिन श्रीमती बिरसी भगत जो अत्यंत सीधे-साधी आदिवासियों की तरह रहन-सहन करते अपनी जीविकोपार्जन कर रही है। साथ-ही-साथ रामडेरा जो गाँव है वह अत्यंत दुर्गम और निर्जन प्रदेशों में है। वहाँ न कोई पशु-पक्षी है न कोई बस्ती है। वहाँ सिर्फ वालुका राशि मय प्रदेश ही दिखाई देता है। ऐसे निर्जन प्रदेशों में भी आदिवासी अत्यंत हीन-दीन, कष्टप्रद और पहाड़ी प्रदेशों में आज भी आवास कर रहे हैं। वहाँ न कोई सुविधा है न साधन है। इससे स्पष्ट होता है कि आदिवासियों के विकास के बारे में खूब नारे सिर्फ लगाए जाते हैं। लेकिन यथार्थ रूप में आदिवासियों का विकास उस पहाड़ी, दुर्गम, निर्जन प्रदेशों में रहनेवाले आदिवासियों को तक नहीं पहुँचती। इसी प्रकार की हालत रहे तो कभी भी आदिवासियों का विकास नहीं होगा। इसका वास्तविक चित्रण लेखक ने करने का प्रयास किया है।

2.5.4.3 वेशभूषा -

'हस्तक्षेप' उपन्यास में लेखक ने वेशभूषा के बारे में लिखते समय नंग-धडंग आदिवासी बच्चों का वर्णन किया है। रामडेरा में रहनेवाले लोग सिर्फ धोती ही पहनते हैं। धोती के सिवाय उनके शरीर पर कोई वस्त्र दिखाई नहीं देता। चिलचिलाती धूप, तेज बारिश और हाड़ को कंपा देनेवाली सर्दी में भी यह लोग नंग-धडंग आदिवासी अपना जीवन यापन करते हैं। आज

अधिकांश आदिवासी लोग शिक्षा से शिक्षित बनकर अपनी वेशभूषा आम लोगों की तरह वस्त्र पहनते दिखाई देते हैं। लेकिन ऐसे लोगों की संख्या कम ही दिखाई देती है। आज ऐसे कई आदिवासी प्रदेश, बस्तियाँ हैं जहाँ लोग सिर्फ एक धोती ही पहनकर जीवन व्यतीत कर रहे हैं। ऐसे कई प्रदेश होंगे बच्चे नंग-धडंग, औरतें और पुरुष लोकलज्जा के कारण सिर्फ धोती पहनते हों और औरतें सालभर एक ही साड़ी धोकर पहनती होंगी। बच्चे नंग-धडंग पहाड़ों, दुर्गम पर्वतों, दरियों में घूमते-फिरते होंगे। इसका चित्रण कई आदिवासी प्रदेशों में दिखाई देगा। इनकी तरफ कोई ध्यान भी नहीं देता। लेकिन विकास के नाम पर अनुदान ऐंठने का कार्य स्वार्थी राजनेता लोग कर रहे हैं। इसका यथार्थ चित्रण लेखक ने यहाँ किया है।

2.5.4.4 खान-पान -

आदिवासियों के खान-पान के बारे में बताते समय लेखक ने छात्रावास में आदिवासी लड़कियों को किस तरह खाना दिया जाता है, इसका चित्रण किया है। दाल में ज्यादा पानी और दाल कहीं-कहीं पर ही दिखाई देती थी। सब्जी में मसाले के नाम पर सिर्फ लाल मिर्च और हल्दी ही थी। चावल भी अच्छा नहीं था। वह सस्ता और स्वादहीन होता था। गेहूँ घटिया स्तर का था। गेहूँ की रोटी बिल्कुल सफेद और चमड़े की तरह कठिन जो खाने लायक बिल्कुल अच्छी नहीं होती है। चावल में कंकड़ ही ज्यादा; वह ठीक तरह से बिना भी नहीं जाता था। इस तरह का खाना छात्रावास की लड़कियों को दिया जाता था। वह भी स्वादहीन और सस्ता, हीन दर्जा का देते थे। प्रायः आदिवासी लोग दारू के संग चना चखने की आदत का भी वर्णन यहाँ लेखक ने किया है। लेखक ने आदिवासी एतवा का भी वर्णन किया है जो कुली का काम करके उससे जो रुपये मिलते हैं उनसे ही घर में हँडियाँ चढ़ाता था। जब वह खाने की कुछ चीजें लेकर जाता है तब ही उसके घर में खाना पकाया जाता है। इस तरह का विदारक चित्रण भी लेखक ने यहाँ किया है। आदिवासी लोग आज भी इस तरह का जीवन व्यतीत कर रहे हैं। शराब, हँड़ियाँ, होड़ोंग यह आदिवासियों के खाद्य पदार्थ हैं। नशाखोरी ही उनकी तबाही का प्रमुख कारण है। मगर आदिवासी लोग अपनी परंपरा का निर्वाह करने के लिए इसका शराब को अनिवार्य मानते हैं। लेकिन यह चीजें ही उनकी विनाश का कारण बनी हुई है। यहाँ लेखक कहते हैं- ''आदिवासियों का सबसे बड़ा शत्रु है- शराब, हंड़ियाँ, होड़ोंग, चाहे इसे जिस नाम से पुकार लो। यह नशाखोरी

ही आदिवासियों को तबाह किए रहती है। मगर आदिवासी परंपरा के नाम पर नशा नहीं छोड़ते। यह शराब उनसे उनकी जमीन छीन लेती है... उनकी बहू-बेटी छीन लेती है... उनसे उनकी मातृभूमि छुड़वा देती है... उनकी हर दुर्दशा के केंद्र में यह मदिरा ही होती है।''[1] इन बातों से पता चलता है कि मदिरा छोड़े बिना आदिवासियों का विकास नहीं हो सकता। दारू के लिए वह सबकुछ बेचने के लिए भी आगे-पीछे नहीं देखते। एक शराब की बोतल के लिए भी आदिवासी लोग अपनी बड़ी-सी-बड़ी जमीन बेचते यहाँ दिखाई देते हैं। दारू ही इनका प्रिय पेय है। यहाँ के जंगलों में एक फल होता है- 'पियार'। जिसका बीज तोड़ने पर चिरौंजी निकलती है। बड़ा स्वादिष्ट होता है यह फल। शहरी लोग पियार को 'प्यार' बोलते हैं। यहाँ के आदिवासी यह फल बड़े प्यार से खाते हैं। इस तरह के खान-पान का वर्णन यहाँ चित्रित किया है।

2.5.4.5 परंपरा और रीतिरिवाज -

परंपरा का निर्वाह करना आदिवासी अपना आद्य कर्तव्य मानते हैं। आदिवासी दारू पीना, नाचना-गाना, रीतिरिवाजों का निर्वाह करना अनिवार्य मानते हैं। यदि आदिवासियों के जीवन प्रणाली में कोई सुधार एवं विकास करना चाहते हैं तो उनका साथ आदिवासी लोग नहीं देते। इस तरह की कार्य प्रणाली आदिवासी लोग अपनाते नजर आते हैं। यहाँ लेखक ने बताया है कि ब्राह्मण पूजा-पाठ करता है तो आदिवासियों के बीच यही काम 'पाहन' करता है। यहाँ आदिवासियों के पुरोहित को 'पाहन' नाम से अभिप्रेत किया गया है। आज का 'पाहन' शब्द ब्राह्मण से ही निकला हुआ शब्द है। पाहन ब्राह्मण का ही अपभ्रंश है। आदिवासियों के बारे में लेखक कहता है कि ''उनका यह दृढ़ विश्वास था कि आदिवासी जहाँ ईमानदार और मेहनती होता है, वहाँ शराब देखते ही ऐसा पिघलता है कि उससे कुछ भी करवाया और उगलवाया जा सकता है।''[2] यहाँ यह स्पष्ट होता है कि आदिवासी शराब देखते ही सब कुछ भूल जाता है और कोई भी काम करने के लिए तैयार होता है। परंपरा से आदिवासी जीवन का यथार्थ वर्णन किया है। ''वह मानती है कि परंपरा के नाम पर यदि आदिवासी अपने को युग के अनुरूप नहीं ढालेंगे, तो उनका

---

1. श्रवणकुमार गोस्वामी - हस्तक्षेप, पृ. 145-146
2. श्रवणकुमार गोस्वामी - हस्तक्षेप, पृ. 92

शोषण कभी भी बंद नहीं हो पाएगा।''[1] इस बात से यह साबित होता है कि आदिवासी को परंपरा का निर्वाह करते समय उन्हें काल के अनुरूप अपने को बदलना चाहिए, नहीं तो आदिवासियों का शोषण कभी भी बंद नहीं होगा। यही यथार्थ-चित्रण लेखक ने परंपरा और रीतिरिवाज के द्वारा प्रस्तुत किया है।

2.4.5.6 नृत्य -

श्रवणकुमार गोस्वामी जी ने 'हस्तक्षेप' में आदिवासी नृत्य का भी वर्णन किया है। 'नृत्य' आदिवासी जीवन का अनिवार्य अंग है। उनके जीवन में नृत्य को अनन्य साधारण महत्त्व है। 'नृत्य' के बिना कोई भी कार्य पूर्ण नहीं होता। शादी-ब्याह, जन्मोत्सव, देवी-देवताओं की पूजा, पितरों की पूजा, धान्य की कटाई, बीज की रोपाई हो आदि कार्य नृत्य के बिना कतई संपन्न नहीं होते। लेखक यहाँ सांस्कृतिक कार्यक्रम का वर्णन करते हैं। 'महात्मा गांधी उच्च विद्यालय' के मैदान में एक विराट सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन नेताजी और रहमत अली ने किया है। उसके लिए जिलाधीश महोदय भी पधारनेवाले थे। वहाँ सांस्कृतिक कार्यक्रम में आदिवासी नृत्य और कवि सम्मेलन भी रखा है। आदिवासी नृत्य के कई दौर भी गुजर गए थे। मांदर, नगाड़े, बाँसुरी, झाल आदि की मिश्रित ध्वनि ने लोगों को ऐसा मुग्ध करके रखा था कि वह टस-से-मस होने के लिए भी कोई तैयार नहीं था। एक आदिवासी युवती ने सँपेरा नृत्य भी वहाँ प्रस्तुत किया था। करमा भगत ने तो बाँसुरी बजाकर श्रोताओं को पूरी तरह मंत्रमुग्ध बनाकर छोड़ दिया था। यहाँ लेखक ने आदिवासी नाच-गान की कला के बारे में कहते हैं- ''आज यह स्पष्ट हो गया कि नाच-गान और संगीत में हमारे ये आदिवासी भाई किसी से भी कम पारंगत नहीं हैं।''[2] आदिवासी नृत्य को संस्कृति में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। आदिवासियों के जीवन में कोई भी आनंददायी प्रसंग या घटना हो वह नृत्य के बिना पूरी नहीं होती। 'नृत्य' ही आदिवासी संस्कृति का प्रतीक है। वे अपने जीवन में अपनी भाव-भंगिमाओं को व्यक्त करने के लिए नृत्य और संगीत का सहारा लेते हैं। इसलिए नृत्य के लिए आदिवासियों के जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान है।

---

1. डॉ. सतीश पांडेय - आदिवासी शोषण और व्यवस्था-विरोधी 'हस्तक्षेप', पृ. 65
2. श्रवणकुमार गोस्वामी - हस्तक्षेप, पृ. 40

2.5.4.7 कृषि -

आदिवासियों में कृषि के प्रति लगाव है। आदिवासी 'प्रकृति पुत्र' होने के कारण उनके जीवन में वृक्ष, पशु-पक्षियों, कृषि और वन को अनन्य साधारण महत्त्व है। आदिम काल से आज तक आदिवासी लोग प्रकृति प्रेमी होने के कारण पेड़, पशु-पक्षियों, कृषि और दुर्गम पहाड़ियों से अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं। इन सब बातों को उनके जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। वह आधुनिक सभ्यता की चकाचौंध से दूर दुर्गम पहाड़ियों, दरियों, जंगलों में रहना पसंद करता है। उनका कृषि के प्रति बहुत लगाव होता है। यहाँ करमा भगत के द्वारा लेखक ने प्रस्तुत किया है। करमा भगत और बिरसी भगत दोनों भी उच्च शिक्षित और संपन्न आदिवासी कहलाते हैं। लेकिन उनका कृषि के प्रति (प्रेम) बहुत लगाव दिखाई देता है। जब सरकार ने यहाँ बाँध बनाने की योजना में असंख्य आदिवासियों का विस्थापन करके उनकी जमीन बड़े-बड़े लोगों ने सस्ते दाम में खरीदकर उस पर बड़ी-बड़ी कोठियाँ बनाई हैं। लेकिन बिरसी भगत के पति सरकारी अधिकारी के यहाँ गाड़ी के ड्रायव्हर होने के कारण उस प्रदेश में सिर्फ उनकी ही जमीन बिकने से रह गई थी। वे हर साल गोबी की फसल उगाकर अच्छी आमदनी प्राप्त करते हैं। करमा भगत तो विश्वविद्यालय में प्रोफेसरी भी करता है। लेकिन वह छुट्टी के दिन और हर रोज प्रातः छह बजे से नौ बजे तक गोबी की बारी में काम करता है। इससे पता चलता है कि आदिवासी कितना भी शिक्षित हुआ हो तो भी उसका कृषि या प्रकृति प्रेम कम नहीं होता। आदिवासी और वन एक-दूसरे के पूरक हैं। अतीत में जहाँ वनों ने आदिवासी का भरण-पोषण किया है वहाँ आदिवासियों ने भी वनों का संरक्षण करने में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। यहाँ कृषि के प्रति आदिवासी का प्रेम सूक्ष्मता से लेखक ने चित्रित किया है।

2.5.4.8 शिक्षा व्यवस्था -

शिक्षा समाज के निर्माण का अभिन्न अंग होती है। शिक्षा व्यक्तित्व के विकास में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होती है। आदिवासी अनपढ़ एवं अज्ञानी होने के कारण आदिवासी लोगों का राजनेता, बुद्धिजीवी, पुलिस, गैर-आदिवासी, आदिवासियों के नेता कहें जानेवाले आदि लोगों ने उनका नाजायज फायदा उठाया है और अपनी तिजोरियाँ भरने का काम किया है। 'आदिवासी महिला छात्रावास' को जो अनुदान सरकार से मिलता है, वह छात्रावास तक पहुँचता ही नहीं।

उसको अधिकारी लोग ही हड़पते हैं। इसके बारे में आदिवासी लोग कभी शिकायत भी नहीं करते। आदिवासियों के विकास के नाम पर प्रो. चौधरी विदेश यात्रा करते हैं और सिर्फ अर्थ और यश प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। डॉ. चौबे जैसे बुद्धिजीवी लोग भी यहाँ दिखाई देते हैं, जो पैसे लेकर हर काम करने के लिए सदैव तत्पर होते हैं। जैसे कि किसी को नाटक, कविता, निबंध, व्यंग्य या प्रहसन लिखकर चाहिए तो डॉ. चौबैं को याद करना चाहिए। "अगर किसी को पीएच्. डी. या डी. लिट् की थीसिस चाहिए तो वह डॉ. चौबे से मिल ले, उसे एक महीने के अंदर सजिल्द थीसिस प्राप्त हो जाएगी, वह भी घर बैठे।"[1] इससे पता चलता है कि बुद्धिजीवी लोग पैसों के लिए कुछ भी कार्य करने के लिए तैयार होते हैं। "शिक्षा तंत्र की बेईमानियों, लतरानियों, पदोन्नतियों तथा पैसों के लिए किसी भी सीमा तक गिरने को तैयार औरतों की जो कहीं भी, कभी भी बिछ जा सकती है और उन पुरुषों की जो राजनेता के सामने साष्टांग की मुद्रा में अहर्निश खड़े हैं।"[2] इससे लेखक यहाँ बुद्जीवी लोगों पर तीखा प्रहार करता है। इन लोगों ने शिक्षा को बाजारू रूप प्रदान किया है। वह आदिवासियों को शिक्षा न देकर सिर्फ शिक्षा के नाम पर दिखावा प्रदर्शित करता है। यहाँ शिक्षा प्राप्त करने के लिए गरीब आदिवासी लड़कियाँ पता नहीं किन क्षेत्रों, गाँवों और वन प्रांतों से आती हैं। उन्हें एक सुनहरे भविष्य की तलाश होती है। यदि उन्हें उपयुक्त परिवेश नहीं मिला तो उनके सपने कभी पूरे नहीं हो सकते। यदि उन्हें सही मार्ग नहीं दिखाया तो उनके सपने कभी पूरे नहीं हो सकते। लेकिन यहाँ शिक्षा व्यवस्था में फैली हुई अराजकता और घिनौने षड्यंत्र की शिकार बन जाती हैं- आदिवासी बालाएँ एवं आदिवासी लोग। इस मोहजाल में आदिवासी युवतियों का दैहिक शोषण भी यह बुद्धिजीवी लोग करते हैं। सांस्कृतिक कार्यक्रम के नाम पर यह लोग उनका शारीरिक एवं आर्थिक शोषण भी करने के लिए पीछे नहीं हटते हैं। इस तरह आदिवासियों के जीवन में शिक्षा व्यवस्था की हालत बन चुकी है।

2.5.4.9 यातायात -

आदिवासी जीवन में यातायात की असुविधा के कारण भी कई-कई बार उनको मौत का शिकार बनना पड़ता है। यातायात की असुविधा होने के कारण जंगली हिंस्त्र पशुओं से

---

1. श्रवणकुमार गोस्वामी - हस्तक्षेप, पृ. 31
2. अशोक प्रियदर्शी - राजनीति की बिसात पर आदिवासियों को मोहरा बनाए जाने की प्रवृत्ति में सार्थक हस्तक्षेप, पृ. 52

अपनी रक्षा करना उन्हें बहुत कठिन होता है। उन्हें किसी भी प्रकार की सुविधा नहीं होती। 'हस्तक्षेप' में लेखक ने रामडेरा गाँव का वर्णन करते समय इसका जिक्र किया है। रामडेरा गाँव जाते समय 'शंख' नदी को पार करना आवश्यक होता है। करमा महाकाव्य लाने के लिए जाता है, लेकिन वहाँ की यातायात की असुविधा देखकर बहुत घबरा जाता है। उसी समय सिर्फ धोती पहना हुआ आदिवासी युवक उसे दिखाई देता है तो उसे पहले आनंद होता है और उससे घबरा भी जाता है। वहाँ नदी पार करने के लिए कोई पुल या अन्य दूसरा साधन भी वहाँ उपलब्ध नहीं है। दूर-दराज तक वहाँ कोई पशु या आदमी तक नजर नहीं आता। चारों ओर एक भयावह सन्नाटा व्याप्त है। सभी ओर सिर्फ वालुका राशिमय पहाड़ ही दिखाई देता है। पहाड़ी नदियों के बारे में लेखक कहता है कि "ऊपर से वे शांत गंभीर लगती हैं, पर उनके भीतर अंतर्धारा प्रवाहित होती रहती है। जो पहाड़ी नदियों की इस प्रकृति से परिचित नहीं होते, वे अकसर धोखा खाया करता हैं और कभी-कभी ऐसे लोग अपनी जान भी गँवा बैठते हैं।"[1] यहाँ लेखक कहता है कि आदिवासी प्रदेशों में आज भी यातायात की असुविधा ही है। आदिवासी प्रदेशों में यदि घूमना हो या जाना है तो बहुत कठिनाई होती है। फिर भी ऐसी प्रतिकूल परिस्थितीयों में भी आदिवासी लोग अपना जीवन यापन करते दिखाई देते हैं। उनके विकास के लिए सरकार अनुदान देती है, लेकिन यह अनुदान उन तक नहीं पहुँचकर अधिकारी लोग ही हड़प लेते हैं। तथाकथित भ्रष्ट राजनेता लोग सिर्फ अपनी तिजोरियाँ ही भरते हैं। आदिवासी लोगों की कितनी असुविधा होती है, इसकी तरफ आज तक किसी ने भी ध्यान नहीं दिया।

2.5.4.10 शस्त्र -

आदिवासी लोग कृषि, वनोपज के संग्रहण के अतिरिक्त पशु-पक्षियों की शिकार करने के लिए शस्त्रों का प्रयोग करते हैं। जंगल में पशु-पक्षियों की सामूहिक शिकार करना तथा किसी को संतान उत्पत्ती हो तो उसको बड़ी शिकार करके घर लाने की और सबको भोज देने की प्रथा आदिवासियों में दिखाई देती है। आदिवासी लोग गुलेल या पत्थरों के द्वारा भी शिकार करते हैं। आदिवासी में प्रत्येक परिवार में तीर और धनुष्य (कोदंड) का होना अनिवार्य माना जाता है। भाले, फरसेनुमा हथियार भी उनके पास होता है। यहाँ लेखक ने आदिवासियों के शस्त्रों के बारे में

---

1. श्रवणकुमार गोस्वामी - हस्तक्षेप, पृ. 66

बताते समय उन्हें रैली, बंद, आर्थिक नाकेबंदी आदि के आयोजन के समय आदिवासी नंग-धडग, तेज बारिश और हाड़ को कंपा देनेवाली सर्दी के दौरान रैली में आदिवासी अपने-अपने हाथों में तीर, धनुष, टाँगी, फरसा, बल्लम आदि हथियारों के साथ उसमें शामिल होते दिखाई देते हैं। इस रैली में कोई नगाड़ा पीट रहा होता है, तो कोई मांदर पर थाप दे रहा होता है, तो कोई घंटा बजा रहा दिखाई देता है। इससे यहाँ यह दिखाई देता है कि राजनेता लोग अपने स्वार्थ के लिए आदिवासियों का शोषण करते हैं। सिर्फ उनका दिखावा करके आदिवासियों का किसी भी प्रकार से विकास नहीं करते। आदिवासियों के प्रति झूठी सहानुभूति दिखाकर अपना काम उगालने में राजनीतिक, गैर-आदिवासी, पुलिस, विधायक, रहमतअली और नेताजी जैसे लोग उनका इस्तेमाल करते आए हैं। फिर भी आदिवासी लोग उनके प्रति कोई भी शिकायत करते नहीं।

2.5.4.1 औद्योगिकीकरण का प्रभाव -

आदिवासी लोगों के जीवन पर औद्योगिकीकरण का प्रभाव भी दिखाई देता है। औद्योगिकीकरण के कारण आदिवासियों का जीवन अत्यंत कष्टप्रद और पीड़ित बन चुका है। आदिवासी धरती के बेटे होने के बावजूद उनको भूमिहीन, मजदुरी का जीवन जीना पड़ रहा है। उनसे उनकी जमीन छीन कर, उस जमीन पर बड़े-बड़े कारखानों का सृजन किया है। लेकिन आदिवासी लोग आज भी दर-दर की ठोकरें खाकर अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं। राज्य सरकार को जितना लाभ उन कारखानों से होता है, उस पर यहाँ के आदिवासियों का आधा से अधिक हिस्सा बनता है। लेकिन यहाँ के आदिवासियों को उस हिस्से से वंचित रखा जाता है। इसका परिणाम यह हुआ है कि आदिवासी और भी निर्धन ही बनता जा रहा है। उसका जीवन और संघर्षमय कष्टप्रद एवं प्रतिकूल बन गया है। वह एक जून की रोटी के लिए तड़पता है, नंग-धडंग, आदिवासी आज भी हमें सड़क पर दिखाई देते हैं। उनके बच्चे रोटी के लिए तड़पते, चिल्लाते हैं। आज भी यह चित्र आदिवासी समाज में हमें दिखाई देता है। औद्योगिकीकरण का प्रभाव आदिवासी जीवन पर इस तरह पड़ा है। इसका यथार्थ चित्रण लेखक ने यहाँ किया है।

2.5.4.12 भाषा -

आदिवासियों के जीवन में उनकी भाषा को महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। आदिवासियों की भाषा में और हमारी भाषा में बहुत फर्क हमें दिखाई देता है। उनकी भाषा के कई

15488

शब्दों का उच्चारण अलग ढंग से किया जाता है। जैसे कि यहाँ महुआ और फुलिया के संवाद से भी हमें पता चलता है। जैसे कि "मैडम 'एगो बात हम बालें ?", "...आपको हियाँ नहीं आना चाहिए था।" "...इ ठीक जगह नहीं है।" "हियाँ बहुत ज्यादा गिजगिज है।"[1] उनकी भाषा में और हमारी भाषा में बहुत अंतर यहाँ हमें दिखाई देता है। जब महुआ बिरसी को मिलने जाती है, तब महुआ और उस रिक्षावाले का संवाद आदिवासी भाषा में हमें यहाँ दिखाई देता है। जैसे कि "तो अइसे बोलिए न कि आप भगताइन मास्टरनी को खोज रही है।" दूसरा रिक्शावाला उसे बताने लगता है कि "थोड़के आगे बइढ़ के दाहिना बटे घुइर जाबे। एगो लोहा का बड़का गेट दिसी। गेट के ढकढकाबे तो भीतर से अपने केउ निकली।"[2] यहाँ आदिवासी को महुआ की हिंदी उसे कोई समझ में नहीं आ रही थी। यहाँ विधायकजी और एतवा के संवाद से पता चलता है कि "मालिक, आज तो हम इधिर आ गया से वास्ते काम करने नइ जा सका। कुछ लेके नई जाएगा तो घर में हँडियाँ भी नई चढ़ेगा।"[3] यहाँ मनबोध की दुकान पर दो रिक्शावालों का संवाद आदिवासी भाषा में इस प्रकार है- "अरे ऊ तो जमाने अलग था। उस समय तो हम दिन में सुतल रहते थे। खाली रात के समय हम अपना रेक्सा निकाले थे। रेक्सा निकाल के हम आमछा के सामने खड़ा हो जाते थे। रोज एगो लड़की भीतरे से निकलती थी। हम उसको रोज नया-नया होटल में पहुँचा देते थे। उ रोज हमको एगो पचास टकिया नोट थमा देती थी।"[4] यहाँ गुजरे हुए दिनों के बारे में दो रिक्शावालों का संवाद आदिवासी भाषा में करते हैं। आदिवासी लोगों को आम लोगों की भाषा जल्दी समझ में नहीं आती। लेखक ने यहाँ लोकोक्तियाँ, मुहावरें, कहावतों और अंग्रेजी आदि अनेक शब्दों के द्वारा आदिवासी भाषा को सुंदर और प्रभावपूर्ण बनाया है।

निष्कर्ष -

आदिवासी जीवन और विवेच्य उपन्यास में चित्रित आदिवासी जीवन में काफी हद तक समानता दिखाई देती है। आदिवासी जीवन में प्रतिकूल परिस्थितियों में संघर्ष करते हुए आदिवासी लोग स्वच्छंदी जीवन जीने के आदि हो गए हैं। वे लोग सहजता और सरलता से जो

---

1. श्रवणकुमार गोस्वामी - हस्तक्षेप, पृ. 21
2. श्रवणकुमार गोस्वामी - हस्तक्षेप, पृ. 61
3. वही, पृ. 80
4. वही, पृ. 106

कुछ उपलब्ध होता है वह लेकर आनंदमयी जीवन जीते हैं। प्राकृतिक परिवेश को अपना आश्रयस्थलं एवं निवासस्थान बनाकर जीवन-यापन करते हैं। आदिवासी लोग प्रकृति के आदिम होने के कारण तथा प्रकृति पुत्र होने के कारण प्रकृति को किसी भी प्रकार की हानि नहीं पहुँचाते। बल्कि उससे अपना गहरा रिश्ता बनाकर अपना उदर निर्वाह करते हैं। आदिवासियों का जीवन सदैव अभावग्रस्तता में बीतता है। आदिवासियों का रहन-सहन, नृत्य, संगीत, सामाजिक व्यवस्था, आर्थिक स्थिति, संस्कृति, भाषा, धार्मिक, उत्सव-पर्व एवं त्यौहार, परंपराएँ एवं रीतिरिवाज, सबकुछ प्रकृति से तादात्म्य स्थापित करके अपना जीवन व्यतीत करते हैं। वे ज्यादातर वृक्षों से अपनी जीविका के माध्यमों को ढूँढ़कर उससे अपना काम चलाते हैं। उनमें संचय करने की प्रवृत्ति नहीं होती, बिना वजह वह जंगलों को नुकसान नहीं पहुँचाते हैं बल्कि पर्यावरण को सुरक्षित रखने में आदिवासियों का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। लेकिन 'हस्तक्षेप' उपन्यास में श्रवणकुमार गोस्वामी जी ने आदिवासी जीवन को एक नए दृष्टिकोण से प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है। आदिवासियों के जीवन और संस्कृति को लेकर इधर बहुत कुछ लिखा गया है। लेकिन बदलती परिस्थितियों में जो नए-नए बदलाव एवं समस्याएँ उनके जीवन में आयी हैं उनको श्रवणकुमार गोस्वामी जी ने पहली बार समाज के सामने यथार्थ रूप में प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है। आदिवासी जीवन का यथार्थ रूप में चित्रित किया है। आदिवासी 'कल्याण', 'विकास', 'संस्कृति' और 'आदिवासी सांस्कृतिक विकास परिषद' आदि अनेक नामों से आदिवासियों का शोषण किया जाता है। सरकार से अनुदान पाकर उनका शोषण यह राजनीतिज्ञ, आदिवासियों के नेता कहे जानेवाले लोग और गैर आदिवासियों ने विकास न कर उनके नाम पर सिर्फ आर्थिक लूट ही मचायी है। इसका यथार्थ चित्रण 'हस्तक्षेप' उपन्यास में लेखक ने आदिवासी जीवन चित्रण करके किया है। आदिवासी जीवन और विवेच्य उपन्यास का आदिवासी जीवन का अध्ययन करके निष्कर्ष प्रस्तुत किया है। यथार्थ रूप में 'आदिवासी' शब्द 'जाति' या 'धर्म' की तरह एक विशेषण बनकर उसके नाम पर अपना व्यापार बनाकर पैसा वसूल करके का राजनेता लोगों ने कर आदिवासियों का शोषण ही किया है। उनका जीवन नरकमय बनाने के लिए जिम्मेदार यह प्रस्थापित राजकीय व्यवस्था और तथाकथित राजनेता लोग, गैर-आदिवासी, पुलिस, सावकार, महाजन, जमींदार एवं आदिवासियों के नेता कहे जानेवाले लोग भी शामिल हैं। इस तरह लेखक ने आदिवासी जीवन चित्रित करने का प्रयास किया है।